गुरु नानक

एक जीवन-चित्र

डॉ. हरिराम गुप्त

1970

नेशनल पब्लिशिंग हाउस

दिल्ली

गुरु नानक फाउंडेशन पंच जन्म-शताब्दी स्मृति-ग्रन्थ

गुरु नानक

जीवनी, युग एवं शिक्षाएं

आमुख

डॉ० ज़ाकिर हुसैन

भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति

भूमिका

डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन

भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति

प्रधान सम्पादक

गुरमुख निहालसिंह

गुरु नानक फाउंडेशन, नई दिल्ली

के लिए

नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली

द्वारा प्रकाशित

गुरु नानक फाउंडेशन के तत्त्वावधान में संकलित एवं प्रचारित

© १९७०, गुरु नानक फाउंडेशन

आवरण : नारायण
प्रथम संस्करण, १९७०
मूल्य :
पुस्तकालय संस्करण : दस रुपये
पेपरबैक : चार रुपये

प्रकाशक :
नेशनल पब्लिशिंग हाउस
२/३५, अन्सारी रोड, दरियागंज, दिल्ली-६

मुद्रक : रायसीना प्रिंटरी, दिल्ली-६

: ३ :

गुरु नानक : एक जीवन-चित्र

डा० हरिराम गुप्त

समकालीन घटनाएं

गुरु नानक का जीवन-काल (१४६९-१५३९) युगांतरकारी था। उस समय भारत तथा यूरोप, दोनों स्थानों में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण घटनाएँ हुई।

१४८५ में इंग्लैण्ड में ट्युडर शासन की स्थापना के साथ ही न केवल वहाँ, प्रत्युत सामान्य रूप से सारे यूरोप में ही आधुनिक युग का आविर्भाव हुआ। यह **पुनर्जागरण**[1] (रेनासाँ), साहसिक कृत्यों तथा **खोजों**[2] और **धार्मिक सुधार**[3] का काल था। भारत में भी यह धार्मिक 'रेनासाँ' युग था। भक्ति आन्दोलन अपने उत्कर्ष पर था। उत्तर प्रदेश में रामानन्द तथा कबीर; महाराष्ट्र में नामदेव तथा एकनाथ जैसे प्रमुख नायकों ने ईश्वर की एकता, प्रेम तथा शांति का संदेश प्रचारित कर देश के विभिन्न भागों में सराहनीय कार्य किए थे।

गुरु नानक के समसामयिकों में जिनका उल्लेख किया जा सकता है वे हैं : (१) **वल्लभाचार्य**[4] (जन्म १४४९) जिनके अनुयायी गुजरात तथा राजस्थान में बहुत थे। (२) **चैतन्य महाप्रभु** (१४८६-१५३३) जिनका प्रभाव बंगाल में था। वह बंगाल के एक महान् सन्त तथा कृष्ण के परम उपासक थे। ईश्वर में अपने विश्वास और भक्ति के कारण उन्होंने लोगों में महत् धार्मिक उत्साह को जगाया। गीतों तथा नृत्यपूर्ण कीर्तनों द्वारा उनके अनुयायी ईश्वर दर्शन के निमित्त आत्मविभोर हो जाते थे। (३) **मीराबाई**, जो १४४९ में जोधपुर में

---

१. इंग्लैण्ड में कोलेट ने १५१० में संत पॉल के प्रसिद्ध ग्रामर स्कूल की स्थापना की। इरैस्मस ने १५१६ में ऑक्सफ़ोर्ड में कोर्पस खीस्टी कॉलेज खोला जिसमें यूनानी भाषा पढ़ाने के लिए यूनान से शिक्षक बुलाये गए।

२. १४९२ में कोलम्बस ने अमरीका की खोज की, वास्को द गामा ने भारत की दिशा में समुद्री मार्ग का पता लगाया, तथा फ़र्डीनैन्ड मागेल्लन ने विश्व की प्रथम जहाज़ यात्रा की।

३. मार्टिन लूथर ने जर्मनी में १५१७ में जो धार्मिक सुधार किए उससे प्रोटैस्टेंट विचारों की स्थापना हुई। सोसाइटी ऑफ़ जीजस अथवा ईसू-व्यवस्था का जन्म १५३९ में हुआ।

४. वल्लभाचार्य ने सत्, चित तथा आनन्द का महत्त्व बताते हुए एक भक्ति पद्धति की स्थापना की, जिसमें कठिन नैतिकता तथा आत्मत्याग के स्थान पर आत्मतोष तथा जीवानन्द पर जोर डाला गया। यह थी कृष्ण-भक्ति धारा।

जन्मी थीं, भगवान् कृष्ण की उपासिका तथा महान् संत, कवियित्री और भक्ति-गीतों की गायिका थीं। इनके भजन आज भी लोकप्रिय हैं तथा देश के सभी भागों में गाए जाते हैं। (४) कवि **तुलसीदास**, जिनका जन्म १५३२ में हुआ, राम उपासना के महान् प्रवर्तक थे। ये अमर ग्रन्थ 'रामचरित मानस' के रचनाकार थे। यह आज भी संसार की सबसे अधिक पढ़ी तथा सुनी जाने वाली पुस्तक है।

पूर्व मुग़लकालीन भारत की अवस्था

१४६९ में जब गुरु नानक का जन्म हुआ, उत्तर भारत का शासक बहलोल लोदी (१४५१-१४८९) था। उसके उत्तराधिकारी का नाम सिकन्दर लोदी (१४८९-१५१७) था। इसके बाद इब्राहीम लोदी (१५१७-१५२६) शासक बना। गुरु नानक के समय में बाबर ने मुग़ल साम्राज्य की नींव रखी, तथा बाद में उन्हीं के समय में बाबर के बाद उसका पुत्र हुमायूँ उसका उत्तराधिकारी हुआ।

दसवीं शताब्दी के साथ ही मध्य एशिया से मुसलमान आक्रमणकारियों के लगातार धावे होने लगे। दिल्ली का मुख्य मार्ग पंजाब से गुज़रता था, इसलिए इसी प्रांत के लोगों को सबसे अधिक कष्ट भोगने पड़े। अफ़ग़ानों तथा तुर्कों ने अपने राज्य क़ायम किये, तथा विभिन्न मुस्लिम देशों ने उत्तरी भारत पर राज्य किया। विदेशी शासकों तथा उनके विदेशी प्रतिनिधियों ने सैन्यबल के आधार पर शासन किया। उन्होंने जनता का शोषण किया तथा उसे चूस लिया। उन्होंने अनगिनत अत्याचार किये, ग़ैर-मुसलमानों पर जज़िया नामक व्यक्तिगत टैक्स लगाया तथा यूँ भी उन पर भारी कर लगाये। सिवाय छोटे पदों के बाक़ी सारे ऊँचे पदों पर हिन्दुओं की नियुक्ति के मार्ग बन्द थे। हिन्दू मंदिरों को ध्वस्त कर बड़ी संख्या में मस्जिदों का निर्माण हो रहा था। हिन्दू विद्यालयों को बन्द किया जा रहा था, और हिन्दू सभ्यता तथा संस्कृति को नष्ट[1] करने का हर उपाय किया जा रहा था।

तलवार के ज़ोर पर बहुत-से हिन्दुओं को मुसलमान बनाया गया, तथा जनता के विश्वास को तोड़ा गया। शासकों और शासित के बीच ज़बर्दस्त खाई थी, तथा हिन्दू और मुसलमान आबादियों में भी भेद बर्ता जाता था, यहाँ तक कि हिन्दू फ़क़ीरों को सभी तरह के अपमान सहने पड़ते थे, और उन्हें मुसलमान

---

१. 'द जेयूईस्टस एण्ड द ग्रेट मुग़ल्स' नामक अपनी पुस्तक में सर एडवर्ड मैक्लागन लिखते हैं (पृ० २८) कि "किनारे से फ़तेहपुर (आगरा) तक की सारी यात्रा के दौरान पादरियों ने पाया कि मुसलमानों ने हिन्दू मंदिरों को बर्बाद कर डाला है। पश्चिम तथा पश्चिमोत्तर इलाक़ों में तो स्थिति और भी ख़राब थी।"

फ़क़ीरों से अलग क़िस्म के कपड़े पहनने पड़ते थे। हिन्दू मुसलमानों के रीति-रिवाजों तथा संस्कारों में और उनके रहन-सहन में पूरा भेद[1] था। जनता साहस खो बैठी थी तथा पुंसत्वहीन थी। विगत पाँच सदियों से एक भी उच्चकोटि का हिन्दू नेता सामने नहीं आया था। इस अवधि में, हिन्दुओं का बहुत निम्न दर्जा था। उन्हें बाध्य किया जाता कि वे अपने मस्तक पर टीका लगायें अथवा अपने वस्त्रों पर पहचान के लिए कोई चिह्न[2] लगायें। अच्छी क़िस्म का अन्न खाना, उत्तम वस्त्र पहनना, घोड़े, पालकी अथवा गाड़ियों में चढ़ना उनके लिए मना था। डेरागाज़ी खाँ ज़िले में हिन्दू केवल गधे की सवारी ही कर सकते थे। धर्मनिन्दा क़ानून को बड़ी सख़्ती से लागू किया गया तथा इस्लाम की आलोचना के लिए प्राणदंड मिलता। बोधन ब्राह्मण को सिकन्दर लोदी (१४८९-१५१७) ने इसलिए प्राणदंड दिया कि उसने कहा था कि जैसा इस्लाम है वैसा ही हिन्दू[3] धर्म भी है। हिन्दुओं का धर्म-परिवर्तन अक्सर होता रहता था; लेकिन विशेष अवसरों पर तथा देश के कुछ भागों में तो सामूहिक रूप से धर्म-परिवर्तन कराया जाता था।

जैसा कि प्रो० आर्नल्ड ट्यान्बी ने "द सैकरेड राइटिंग्स ऑफ़ द सिक्ख" (यूनेस्को प्रकाशन, पृष्ठ १०) में कहा है—"हिन्दू धर्म तथा इस्लाम का मुख्य मिलन स्थल भारत है, जहाँ इस्लाम ने हिन्दू धर्म पर हिंसात्मक प्रहार किये हैं। कुल मिलाकर, भारतीय भूमि में इन दो महान् धर्मों का पारस्परिक सम्बन्ध संशय तथा शत्रुता की एक दुःखद कहानी है।"

---

१. हिन्दुओं-मुसलमानों के बीच बहुत से भेदभाव थे—मुसलमान एक ईश्वर में विश्वास करते, जबकि हिन्दुओं की आस्था बहुत से देवी-देवताओं में थी; कम से कम सैद्धान्तिक रूप से तो पैग़म्बर के अनुयायियों में एकता थी, किन्तु हिन्दू जातियों तथा उपजातियों में विभाजित थे, और वे सौपानिक व्यवस्था में विश्वास रखते थे; पूजा के समय हिन्दू पूर्वोन्मुख होते तो मुसलमान पश्चिमोन्मुख; हिन्दू-उपासना में संगीत का विशिष्ट स्थान था, तो मुसलमानी उपासना में वर्जन; हिन्दुओं के लिए गो-पूजक तो मुसलमान थे गो-भक्षक; हिन्दू यज्ञोपवीत धारण करते, मुसलमान खतना करवाते; हिन्दू सामान्यतः एक पत्नी वाले होते तो मुसलमान बहुविवाहित; दोनों जातियों के लोग अपने बाल तथा वस्त्र दूसरे ढंग से संवारते; मुसलमान हिन्दुओं को 'काफ़िर' कहते, इधर हिन्दू उन्हें 'मलेच्छ' की संज्ञा देते।

२. अकबर के शासन काल में भी, लाहौर के सूबेदार, हुसैनक़ुली खाँ ने घोषणा की थी कि "हिन्दुओं को अपने कंधों या आस्तीन पर ख़ास रंग के निशान लगाने होंगे ताकि ग़लती से कोई मुसलमान उन्हें अदब दिखाकर शर्मिन्दा न होवे।" उसने हिन्दुओं को यह आज्ञा भी दी कि वे अपने घोड़ों पर जीन न कसें बल्कि घोड़ों की सवारी के समय जीन को हटाया कर लें। (देखिए श्रीरामकृत "रेलिजस पॉलिसी ऑफ द मुग़ल एम्परर्स" पृ० [illegible])।

३. तवारीख़े फ़रिश्ता (२८१)।

सिकन्दर लोदी के गद्दी पर बैठने के समय गुरु नानक २० वर्ष के थे। शाहज़ादा के रूप में भी सिकन्दर एक धर्मान्ध मुसलमान था। उसने उन सभी हिन्दुओं को मार देना चाहा था जो थानेश्वर के पवित्र तालाव[1] में स्नान के लिए इकट्ठे हुए थे। 'तारीखे दाऊदी' का लेखक अब्दुल्ला, सिकन्दर लोदी की प्रशंसा में लिखता है "वह इतना पक्का मुसलमान था कि उसने काफ़िरों के विभिन्न स्थानों को सम्पूर्णतया नष्ट कर दिया, और उनकी कोई निशानी न छोड़ी। उसने मूर्ति-पूजा के प्रमुख स्थल मथुरा के मठों को नष्ट कर दिया, तथा उपासना के मुख्य स्थानों को कारवाँ सरायों तथा मकतवों में बदल दिया। पत्थर की प्रतिमाओं से बूचड़ गोश्त तोलने का काम निकालने लगे, तथा सभी हिन्दुओं को सख्त मनाही की गई कि वे सिर या दाढ़ी न मुंडायें तथा आचमन-स्नान आदि न करें। इस तरह उसने मूर्तिपूजा सम्बन्धी सारे रस्मों का ख़ात्मा कर दिया; किसी भी हिन्दू को, यदि वह दाढ़ी या सर मुंडाना चाहता, नाई नहीं मिलते। इस प्रकार हर नगर, जैसा वह चाहता था, इस्लाम[2] के रिवाजों का पालन करने लगा।" नागरकोट तथा ज्वालामुखी की प्रसिद्ध मूर्तियाँ टुकड़े-टुकड़े कर बूचड़ों में बाँट दी गईं।

धर्म का ह्रास

गुरु नानक के आगमन के समय हिन्दू तथा इस्लाम, ये दोनों धर्म भ्रष्ट तथा अवनत हो चुके थे। वे अपनी पुरानी शान तथा पवित्रता खो चुके थे। लोगों के लिए वेद अब कठिन ग्रन्थ बन चुके थे तथा उनकी जगह तांत्रिक साहित्य ने ले ली थी। जाति व्यवस्था कठोर बन चुकी थी तथा कई उपजातियाँ भी बन गई थीं। हिन्दू धर्म की आत्मा तो लुप्त हो चुकी थी और उसका बाह्य आवरण भर ही रह गया था। केवल वही रीति-रिवाज बच रहे थे जिनसे विशेष रूप से ब्राह्मणों का कोई निजी लाभ होता था। इस्लाम में भी यही हालत थी। 'रामकली दी वार' में गुरुनानक ने इन स्थितियों पर दुःख प्रकट करते हुए कहा है:

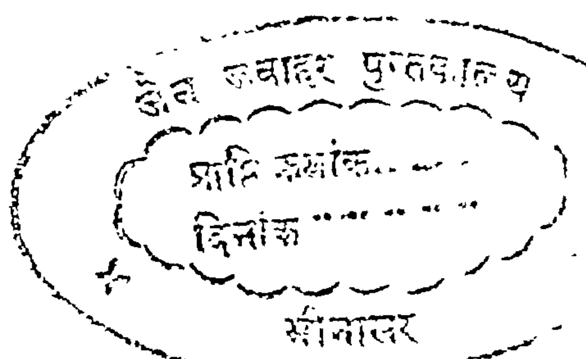
"हिन्दू का पुत्र हिन्दू कहलाया
धारण किया पवित्र जनेऊ
धारण किया पर पाप न रोका
फिर क्यों कर हुआ पवित्र !

---

१. Elliot and Dawson : Abdulla's "Tareekhe Daudi" 1872, Vol. IV, p. 439-40.

२. वही, पृष्ठ ४४७ ।

मुसलमान, धर्म पर गर्व करे,
विना गुरु सद्मार्ग न पावे,
भटके घुप्प अंधेरे में,
विना किए सतकार्य वही
क्यों जाए फिर जन्नत में ?
जोगीपुत्र जोगी वन आया,
कानों में डाली वाली
घर-घर घूम अलख जगाया ।
साईं सब ठौर है, सबका निर्माण करे ।
जो यह पहचाने सच्चा हिन्दू, सच्चा मुसलमान वही है ।
बाक़ी सब नक़ली हैं,
कर्मों का जवाब देना होगा ।
सत्कर्मों से ही मुक्ति मिलेगी—
अन्त में जीत सत्य की होगी ।
रब के सामने सत्य छोड़
कुछ और नहीं टिकेगा ।"[1]



राजनीतिक स्थितियाँ

राजनीतिक अवस्था तो और खराब थी। जैसा गुरु नानक[2] ने कहा—"यह काल तलवार-सा है। शासक तथा राजे बूचड़ों के समान हैं। अच्छाई पर लगाकर उड़ चुकी है।" वह फिर कहते हैं—"कोई ऐसा नहीं है जो घूस लेता या देता न हो। बादशाह की जब तक मुट्ठी गर्म न हो, वह न्याय नहीं सुनाता।"[3]

१५२१ में मुग़ल आक्रमणकारियों ने लोगों के साथ जो व्यवहार किया उसे

---

१. हिन्दू कै घरि हिन्दू आवै। सूत जनेऊ पड़ि गलि पावै।
सुतु पाइ करे बुरिआई। नाता धोता थाइ न पाई ॥
मुसलमानु करे वडिआई। विणु गुरु पीरै को थाइ न पाई ॥
राहु दसाइ ओथै को जाइ। करणी बाझहु भिसति न पाइ ॥
जोगी कै घरि जुगति दसाइ। तित कारणि कनि मुंद्रा पाई ॥
मुंद्रा पाइ फिरै संसारि। जिथै किथै सिरजणहारु ॥
जेते जीअ तेते वाटाऊ। चीरी आई ढिल न काऊ ॥
एथै जाणै सु जाइ सिञाणै। होरु फकड़ हिन्दू मुसलमाणै ॥
सभना का दरि लेखा होइ। करणी बाझहु तरै न कोइ ॥
सचो सचु वखाणै कोइ। नानक अगै पुछ न होइ ॥ (रामकली की वार म० १)

२. कलि काती राजे कासाई धरमु पंखु करि उडरिआ (माझ की वार म० १)

३. मैकालिफ : "दि सिख रिलीजन" जिल्द १, पृष्ठ ५।

भी गुरु नानक ने देखा। मुसलमान देशों की यात्रा से गुरु नानक वापस आ रहे थे। उन्हें अफ़ग़ानिस्तान में ही पंजाब के ऊपर किए जाने वाले बाबर के आक्रमण का, जो उसने १५१९ में दो बार किया, कुछ तो पता चल गया होगा। इन दोनों अवसरों पर नानकदेव पंजाब में नहीं थे। वे पैदल लौट रहे थे किन्तु इरानी तथा इराक़ी घोड़ों पर आने वाले आक्रमणकारियों से बहुत पीछे नहीं थे। घर पहुँचने के पहले वे अपने प्रिय शिष्य लालो के साथ, गुजरांवाला ज़िला में लाहौर से पचास मील दूर सैय्यदपुर (अब ऐमनाबाद) में रुके। जब लालो ने अफ़ग़ान अधिकारियों और सैनिकों के अत्याचारों की बात कही तो गुरु नानक ने जवाब दिया :

हे लालो, बाबर पाप की बारात लेकर काबुल से चढ़ आया है और जबर्दस्ती दान माँग रहा है। शर्म और धर्म दोनों ही छिप गए हैं और झूठ प्रधान होकर फिर रहा है। काजियों-ब्राह्मणों की बात समाप्त हो गयी है और विवाह के मंत्र शैतान पढ़वाता है।[1]

कुछ ही बाद में बाबर सैय्यदपुर पहुँचा। नानक वहीं थे। उस नगर में मुख्यतया धनिक हिन्दू व्यापारी तथा ज़मींदार थे। उन्होंने अपने धन तथा स्त्रियों के रक्षार्थ आक्रमणकारियों का काफ़ी प्रतिरोध किया। बाबर इस कारण नाराज़ हो गया और उसने वहाँ कत्लेआम का फ़रमान जारी किया। सभी युवा स्त्रियाँ दासी बना ली गईं। दूसरी स्त्रियों को ज़बर्दस्ती सैनिकों के लिए अन्न पीसना तथा भोजन बनाना पड़ा। नगर को लूटकर वहाँ आग लगा दी गई। नानक और लालो को लूट में ली गई सम्पत्ति के भारी बोझों को उठाकर सैनिक शिविरों में लाना पड़ा तथा उन्हें अन्न पीसने पर मजबूर किया गया।[2] शिविर में बंदियों पर, ख़ास तौर से स्त्रियों पर किये गए अमानुषिक अत्याचार ने गुरु नानक का कोमल दिल तोड़ दिया। इस कठिन पीड़ा तथा चोट को वह न सह पाये। इसी वेदना में उन्होंने ईश्वर की भी आलोचना की और कहा—

"खुरासान की तुमने रक्षा की
और हिन्दुस्तान का दिल भयभीत कर दिया,

---

१. पाप की जंजु लै काबलहु धाइआ जोरी मंगे दान वे लालो।
सरमु धरमु दोइ छपि खलोए कूड़ु फिरै परधानु वे लालो॥
काजीआ बामणा की गलि थकी अगदु पड़ै सैतानु वे लालो॥ (तिलंग म० १)

२. मोहसिन फ़ानी ने, जो पाँचवें, छठें तथा सातवें गुरु के समकालीन थे, लिखा है— "नानक ने अफ़ग़ानों से क्रुद्ध होकर उनके ऊपर मुग़लों को नियुक्त कर दिया," अर्थात् अफ़ग़ानों को सज़ा देने के लिए उन्होंने देश में मुग़लों को बुला लिया। (दबिस्ताने मजाहिब, पृष्ठ २२३)। मोहसिन फ़ानी के इस गलत निर्णय का कारण अफ़ग़ानिस्तान से तक़रीबन एक साथ ही बाबर और नानक का पंजाब में आना है।

पर हे परम निर्माता, फिर भी
तुम निर्लिप्त क्यों हो ?
महान् मुग़ल बाबर के रूप में
तुमने स्वयं यम को भेजा है।
भयानक क़त्लेआम ने, लोगों
के शोकाकुल ऊँचे स्वरों ने,
क्या तेरे मन में किंचितमात्र
दया नहीं उपजायी, मेरे दाता ?

ओ निर्माता तू सार्वभौम शक्ति है,
सभी देशों औ मनुष्यों का
तू ख्याल कर।
यदि शक्तिवान् प्रहार करे समान शक्तिवान् पर,
फिर दुःख काहे का, शिकवा किसका ?
पर ग़रीब भेड़ों पर भयंकर शेर झपटे
तो गड़रिया चुप खड़ा क्यों देखे, बोलो!

रतन-सा राज बरबाद हुआ
कुत्तों के तीखे दाँतों से।
कोई रोने वाला नहीं इस बात पर !
धन्य हो प्रभु ! कि तुम हमें जोड़ते
हो तो तोड़ते भी तुम्हीं हो।[1]

बन्दी स्त्रियों की दर्दनाक अवस्था का वर्णन नानक इस प्रकार करते हैं :—

"प्रिय सिरों को आच्छादित करने वाले केश
जिनके बीचोंबीच सिन्दूर रेखा होती थी
अब निर्मम कैंची से क़तर दिये गए।

---

१. खुरासान खसमाना कीआ हिन्दुसतान डराइआ।
आपै दोसु न देई करता जमु करि मुगलु चड़ाइआ।
एती मार पई करलाणै तैं की दरदु न आइआ ॥१॥
करता तू समना का सोई।
जे सकता सकते कउ मारे ता मनि रोसु न होई ॥१॥ रहाउ ॥
सकता सीहु मारे पै वगै खसमै सा पुरसाई।
रतन विगाड़ि विगोए कुतीं मुइआ सार न काई।
आपे जोड़ि विछोड़े आपे वेखु तेरी वडिआई ॥२॥ (आसा म० १)

महलों में सुख से रहने वाली बहुएँ
सड़कों पर भीख माँग रही हैं,
उनका कोई शरणस्थल आज नहीं।
हे महिमामय, धन्य हो तुम,
कौन जान सका तुम्हारी लीलाओं को ?
तुम्हारी माया अपरम्पार है प्रभो !

मुंडित मस्तक वाली ये नारियाँ
विवाह के समय कितनी सुन्दर थीं,
पति के साथ बैठी गजदन्त पालकियों में
जब निज गृह आयीं, पवित्र जल गगरियाँ
इन्हीं सरों पर शुभ वर्षा करतीं, स्वागत होता,
सज्जित पंखे, इन्हीं सरों पर डोल रहे थे।
प्रथम गृह प्रवेश पर लक्ष एक रुपया मिलता,
पुनः एक लक्ष जब गृहिणी बनती।
गरी-छुहारे तथा अन्य मृदु फलों
का सेवन करतीं।
वे आसन सुन्दर हो उठते जिन पर
होतीं ये आसीन।
अब गलों में रस्सी बाँधे, इन्हें
पशुवत् खींचा जा रहा आज।
गले की माला टूट गयी, बिखरे मोती;
सौंदर्य, धन इनका सबसे कटु शत्रु;
बर्बर सैनिकों ने बनाया बन्दी
इन्हें, और अस्मत लूटी।
जिसको चाहे प्रभु उठाये !
जिसको चाहे प्रभु गिराये ! !
इस वर्बरता से कुछ थोड़े से
बचकर लौट घर आते,
फिर दूसरे उनसे अपने-अपनों का
हाल पूछ-पूछ ग़म खाते।
कितने तो खो जाते सदा के लिए,
जो बच जाते उन्हें जीवन-भर रोना
और पीड़ा सहना है।

आह नानक, मानव कितना बेवस है सचमुच,
सदा-सदा ही प्रभु की मरज़ी ही
सबसे ऊपर है, सबसे ऊपर है !![1]

भक्ति पद्धति के सुधारक

इन्हीं परिस्थितियों में भक्ति पद्धति के भारतीय सुधारकों ने हिंदू धर्म तथा इस्लाम के अनुयायियों के बीच कटुता को दूर करने का आन्दोलन चलाया। मुसलमान हिन्दुओं को उनकी मूर्ति पूजा तथा जाति व्यवस्था के कारण पीड़ित करते थे। भक्ति उपासक सन्तों ने इन दोनों के विरुद्ध उपदेश दिए। उन्होंने ईश्वर के पितृत्व तथा मानव के भ्रातृत्व पर ज़ोर दिया। इन्होंने बताया कि इससे कोई फ़र्क नहीं पड़ता कि ईश्वर को मुसलमान अल्लाह या ख़ुदा कह कर पुकारे और हिन्दू परमेश्वर और राम कहे। असली कसौटी यह नहीं कि कोई किसमें विश्वास करता है, बल्कि कोई काम किस प्रकार के करता है। कुरान

---

१. जिन सिरि सोहनि पटीआ मांगी पाइ संधूर।
से सिर काती मुंनीअन्हि गल विचि आवै धूड़ि।
महला अंदरि होदीआ हुणि बहणि न मिलन्हि हदुरि ॥१॥
आदेसु बाबा आदेसु ॥
आदि पुरख तेरा अंतु न पाइआ करि करि देखहिं वेस ॥१॥ रहाउ ॥
जदहु सीआ वीआहीआ लाड़े सोहनि पासि।
हीडोली चढ़ि आईआ दंद खंड कीते रासि ॥
उपरहु पाणी वारीऐ झले झमकनि पासि ॥२॥
इकु लखु लहन्हि बहिठीआ लखु लहन्हि खड़ीआ ॥
गरी छुहारे खांदीआ माणन्हि सेजड़ीआ।
तिन्ह गलि सिलका पाईआ तुटन्हि मोतसरीआ ॥३॥
धनु जोबनु दुइ वैरी होए जिन्हीं रखे रंगु लाइ।
दूता नो फुरमाइआ लै चले पति गवाइ ॥
जे तिसु भावै दे वडिआई जे भावै देइ सजाइ ॥४॥
अगो दे जे चेतीऐ तां काइतु मिलै सजाइ।
साहां सुरति गवाईआ रंगि तमासै चाइ ॥
बाबर वाणी फिरि गई कुइरु न रोटी खाइ ॥५॥
इकना वखत खुआईअहि इकन्हा पूजा जाइ।
चउके विणु हिंदवाणीआ किउ टिके कढ़हि नाइ ॥
रामु न कबहू चेतिओ हुणि कहणि न मिलै खुदाइ ॥६॥
इकि घरि आवहि आपणै इकि मिलि मिलि पुछहि सुख।
इकन्हा एहो लिखिआ बहि बहि रोवहिं दुख ॥
जो तिसु भावै सो थीऐ नानक किआ मानुख ॥७॥११॥ (आसा म० १)

और पुराण दोनों ही मानव प्रेम की सीख देते हैं। वे इस पर बल देते है कि ईश्वर की नज़र में कोई ऊँचा या नीचा, बड़ा या छोटा, महान् या क्षुद्र, अमीर या ग़रीब नहीं है। मुसलमान सूफ़ी सन्तों ने भी लोगों को इसी प्रकार के सिद्धान्त समझाये तथा शांति का प्रचार किया, तथा अपने प्रेम तथा समानता के संदेशों द्वारा उन्होंने बहुत से हिन्दुओं को इस्लाम में ले लिया। मुख्य सूफ़ी केन्द्र मुल्तान, पाकपट्टन तथा सरहिन्द में थे। भक्तों ने जनसाधारण की भाषा में तीक्ष्ण गद्य तथा अर्थभरे पद्यों में प्रचार किया ताकि उनकी सीख का प्रभाव श्रोताओं के दिल पर पड़े। जनता से इनका सम्पर्क गाँव के कुओं; बरगद वृक्ष के नीचे जहाँ लोग दोपहर के बाद आराम करते; मेलों-त्योहारों तथा शादी और शोक के मौकों पर होता था। प्रायः ये एक जगह से दूसरी जगह घूमते ही रहते और हर प्रकार ईश्वरीय प्रेम का अपना सन्देश फैलाते।

गुरु नानक का जीवन

गुरु नानक का जन्म सन् १४६९ के पन्द्रह अप्रैल[1] को एक बेदी क्षत्रीय (खत्री) परिवार में लाहौर से ६५ किलोमीटर दक्षिण-पश्चिम में तलवंडी नामक स्थान पर हुआ जो आज ननकाना साहब के नाम से प्रसिद्ध है। उनके जीवन को तीन भागों में बाँट सकते हैं: (१) १४६९-१४९६ अर्थात् २७ वर्षों का गार्हस्थ्य जीवन अथवा आत्मबोध और ज्ञान का काल (२) १४९७ से १५२१ अर्थात् २५ वर्षों का पर्यटन काल अथवा दूसरे धर्मों का अध्ययन तथा अपने विचारों की व्याख्या का काल; (३) १५२२-१५३९ अर्थात् १८ वर्षों तक रावी किनारे कर्त्तारपुर में अवकाश का जीवन-काल जब सिख धर्म की नींव डाली गई।

नानक के पिता एक ग्राम पटवारी अथवा गुमाश्ता, मेहता कालूचन्द थे। नानक ने एक ब्राह्मण शिक्षक से हिसाब तथा बहीखाते का काम लंडे महाजनी

१. चार 'जनम साखियों' में अर्थात् विलायत वाली, मेहरबान वाली, भाई मनीसिंह वाली, तथा ख़ालसा समाचार, अमृतसर से प्रकाशित, साथ ही महिमा प्रकाश में गुरु नानक की जन्मतिथि वैसाख सुदी ३, सम्वत् १५२७ (१५ अप्रैल, १४६९) है। नानक प्रकाश तथा बाद को कुछ किताबों में कार्तिक पूर्णिमा, सम्वत् १५२६ (नवम्बर १४६२) है। जो भी हो, इन सभी ग्रन्थों में यह कहा गया है कि गुरु नानक ७० वर्ष ५ महीने तथा ७ दिन जीवित रहे। सभी सिख पुस्तकों में उनका निधन दिवस असुज वदी १०, १५९६ (२२ सितम्बर, १५३९) बताया गया है। इस प्रकार हिसाब लगाने से गुरु नानक की ठीक जन्मतिथि १५ अप्रैल, १४६९ है।

में सीखा, तथा एक मौलवी से फ़ारसी और अरबी सीखी। सियार-उल-मुतखारिन[1] (Siyar-ul-Mutkharin) के लेखक ने इस मौलवी का नाम सैय्यद हसन बताया है।

चिन्तनशील प्रकृति के कारण गुरु नानक हिन्दू तथा मुसलमान, दोनों जातियों के संतों की संगति में अत्यधिक प्रसन्न होते। उन्हें हर प्रकार के अंधविश्वास तथा मिथ्या विचारों से तीव्र घृणा हो गई। उन्हें अपने पिता की नौकरी या पारिवारिक व्यापारिक पेशे आदि से भी लगाव न था। वे ईश्वर के आज्ञाकारी दास तथा सच्चे भक्त के रूप में मानवता की सेवा करना चाहते थे। उनकी प्रकृति उनके पिता को, जो एक दुनियादार आदमी थे, न रुची। उनका ध्यान संसार की ओर लगाने के लिए नानक का कम उम्र में बटाला में ब्याह कर दिया गया, और उन्हें दो पुत्र हुए—श्रीचन्द तथा लखमीदास। किन्तु विवाह से भी नानक की प्रकृति न बदली। बाप-बेटे में कलह न बढ़े, ऐसा सोचकर नानक की बड़ी बहन नानकी जिसकी शादी कपूरथला के पास सुल्तानपुर[2] में हुई थी, अपने भाई को वहीं ले गई। वहाँ नानक के बहनोई जयराम ने दौलत खाँ लोदी के सरकारी मोदीखाना में नानक को भंडारी की जगह दिलवा दी। गुरु नानक ने ईमानदारी तथा विश्वास से काम किया तथा शीघ्र ही जनप्रिय भंडारी हो गये, किन्तु उनका मन ईश्वर में ही रमा हुआ था, और वे छुट्टी के समय बराबर ईश्वर के गुणगान में लग जाते। तलवंडी का एक मुसलमान मिरासी जिसका

---

१. सैय्यद गुलाम हुसैन खाँ लिखते हैं—"वे खत्री जाति के एक अन्न-व्यापारी के पुत्र थे। चरित्र के नेक तथा देखने में सुन्दर, साथ ही बातचीत में अक्लमंद थे। वे निर्धन भी नहीं थे। उस जमाने में वहाँ पर एक फ़क़ीर या प्रसिद्ध धार्मिक व्यक्ति थे। सैय्यद हसन, जिन्हें धन तथा वाक् शक्ति, दोनों प्राप्त थी। उनके कोई अपना बच्चा न था, अतः नन्हें नानक को जब उन्होंने देखा तो उसकी सुन्दरता से आकर्षित होकर उस पर स्नेह करने लगे तथा उसकी शिक्षा की जिम्मेदारी उठा ली। युवक नानक इस प्रकार प्रारम्भ में ही मुस्लिम विशिष्ट रचनाओं से परिचित हुए तथा शुरू में ही प्रतिष्ठित सूफ़ियों और चिन्तकों की विचारधारा में प्लावित होकर उन्होंने अपनी विद्वता में काफी वृद्धि कर डाली। वे पुस्तकों को इतना पसन्द करते थे कि अपने अवकाश के क्षणों में उन सभी सूत्रों को, जिनका उनके दिल पर प्रभाव पड़ा होता, अक्षरशः अथवा भावमय अनुवाद कर डालते। यह अनुवाद वे अपनी मातृभाषा पंजाबी में करते। धीरे-धीरे इन विलग वाक्यों को उन्होंने सूत्रित तथा व्यवस्थित किया और उन्हें पद्य में बदल दिया। इस समय तक वे अपने जन्मजात पूर्वाग्रहों से मुक्ति पाकर एक सर्वथा भिन्न व्यक्ति बन चुके थे।"
(Translation of Siyar Mutakharin, I, 1786 edition, pp. 82-83)

२. गुरु नानक के सुल्तानपुर जाने तक राय बुलर जो हाल ही में धर्म-परिवर्तित हुआ तलवंडी का मुस्लिम अधिकारी था, उनका बड़ा अनुग्रही तथा प्रशंसक था। (Macauliffe, I, lxxi; Puran Singh, The Book of Ten Masters, Chief Khalsa Dewan Amritsar, p. 1)

नाम मर्दाना[1] था और जो नानक से क़रीब दस साल बड़ा था, उनके मीठे मोहक स्वर, मृदु व्यवहार, मानवप्रेम, प्रेरणापूर्ण तथा अर्थभरे पद्यों तथा ईश्वर के प्रति उनके सच्चे प्रेम के कारण उन्हें बहुत चाहता था। उसे सुल्तानपुर भेजा गया कि वह नानक को ईश्वर से कुछ विमुख कर सांसारिक जीवन की ओर ध्यान लगवाने का प्रयास करे। किन्तु वहाँ पहुँचते ही उस पर नानक का जादू चल गया और नानक जब भजन गाते तो यह उनके साथ रबाब बजाता। लोग बड़ी संख्या में नानक के भजन[2] सुनने को इकट्ठे होते।

ज्ञान प्राप्ति

अन्य लोगों की भाँति नानक पास की नदी में प्रातःकाल स्नान के लिए जाते, और किनारे पर बैठ प्रार्थना करते। एक दिन वेईं[3] में नहाने के बाद वे निकट की एक गुफ़ा में जाकर समाधिस्थ हो गए। तीन दिनों तक इनका पता न चला और लोगों ने समझा कि वे पानी की तेज़ लहरों में बह गये। किन्तु नानक तो ईश्वरभक्ति में खोये हुए थे। उन्हें तभी ईश्वरीय आह्वान और प्रकाश की प्राप्ति हुई ताकि वे अपना संदेश फैलायें और समाज पर आए हुए संकटों को दूर करें।

सचेत होने पर प्रबुद्ध नानक गुफ़ा से बाहर आए और उनके मुख से निकला—"न कोई हिन्दू है न मुसलमान।" इसका अर्थ उनके विचार में यह था कि सब कोई मानवमात्र हैं, उसी महान् शक्ति की संतान हैं। इस प्रकार उन्होंने मानव के सार्वभौम बंधुत्व पर बल दिया। इसका दूसरा अर्थ यह भी था कि हिन्दुओं तथा मुसलमानों दोनों ने अपने धर्मों के सिद्धान्तों की अवहेलना की है, इसलिए वे सच्चे अर्थों में हिन्दू अथवा मुसलमान नहीं रहे। इस तरह उन्होंने यह संकेत दिया कि उनके जीवन का उद्देश्य होगा दोनों जातियों को निकट लाना तथा उनके बीच शत्रुता का अन्त कराना जिससे दोनों शांतिपूर्वक रह सकें तथा अपने विश्वासों का उनके शुद्ध रूप में पालन कर सकें।

गुरु नानक ने पाँच चीज़ों के पालन पर बल दिया—(१) नाम-स्मरण तथा भजन (२) दान (३) स्नान (४) सेवा (ईश्वर तथा मानव की सेवा) (५) स्मरण,

---

१. मर्दाना का जन्म १४५९ में तलवडी में हुआ था। ३७ वर्ष की उम्र में वह सुल्तानपुर गया था। करतारसिंह : सिख इतिहास, भाग २, पृष्ठ २।

२. मोहसिन फ़ानी ने कहा है कि इन दिनों गुरु नानक ने अपना भोजन कम कर दिया था; और बाद में केवल गो दुग्ध तथा अल्प घी पर रहते थे। बाद में वे पवन आहारी बन गये, मानो केवल हवा का ही सेवन करने लगे। (Dabistan, p. 223)

३. इस नदी को काली वेईं कहते थे, जो सुल्तानपुर के पास थी।

अर्थात् ईश्वरीय महिमा तथा निजी मोक्ष अथवा आत्मोपलब्धि के लिए निरंतर भजन तथा स्तुति ।

धर्म प्रचारक गुरु नानक

ज्ञान प्राप्ति के शीघ्र बाद गुरु नानक ने भंडारी की अपनी नौकरी छोड़ दी, तथा अपने पवित्र उद्देश्य के प्रसार के लिए यात्रा आरम्भ कर दी । कुछ समय तक उन्होंने सुल्तानपुर लोदी में धर्म प्रचार किया, किन्तु बाद में अपने निवास स्थान शेखूपुरा ज़िला में चले गए । उनकी प्रचार यात्राओं में उनके दो साथी थे—उनके प्रथम दो अनुयायी, भाई मर्दाना तथा भाई बाला । उन्होंने ईश्वर या पैगम्बर बनकर किसी दैविक शक्ति के दावे नहीं किये, उन्होंने सभी से प्रेम किया और किसी के प्रति बुराई की भावना नहीं रखी । क़ब्रगाहों में कई-कई दिनों तक बैठ और अल्लाह की स्तुति में गायन कर उन्होंने मुसलमानों का विश्वास भी जीत लिया । मुसलमानी इबादतों में शामिल होने में उन्हें कोई हिचक न होती, किन्तु वे देखते कि प्रार्थना में आए हुए लोग खुदा से ध्यान न लगाकर अपने मन को घर-बार और व्यापार की बातों में भटकने देते । इस तरह उन्होंने उन पाँच प्रार्थनाओं (नमाज़ों) का महत्त्व बताया जिन्हें करना मुसलमान ज़रूरी समझते थे :—

पहली नमाज़ सच के नाम से पढ़ो;
दूसरी पढ़ो कि रोटी तेरी नेकी की हो;
तीसरी नमाज़ अल्लाह के नाम पर दान के लिए;
चौथी दिल की साफ़गोई के लिए,
पाँचवी खुदा की याद और इबादत के लिए ।
नेक कामों का कलमा पढ़ो;
नानक कहते हैं, पाखंड झूठा बनाता
इन्सान को, याद[1] रखो ।

गुरु नानक ने बताया कि सच्चा मुसलमान वही है जो नेक काम करता है, बाक़ी सब ग़लत है । हिन्दुओं के प्रति घृणा इस्लाम के अनुकूल आचरण नहीं है, क्योंकि हिन्दू तथा मुसलमान, दोनों ईश्वर के बंदे हैं, दरअस्ल हिन्दू या मुसल-

---

१. पंजि निवाजा वखत पंजि पंजा पंजे नाउ ।
पहिला सचु हलाल दुइ तीजा खैर खुदाइ ।।
चउथी नीअति रासि मनु पंजवी सिफति सनाइ ।
करणी कलमा आखि कै ता मुसलमाणु सदाइ ।
नानक जेते कूड़िआर कूड़ै कूड़ी पाइ ।। (माझ की वार म० १)

मान नामक चीज़ तो कुछ है भी नहीं, इन्सान तो आखिर इन्सान ही कहलायेगा। अलग-अलग चिह्न लगाकर अपने को औरों से भिन्न मानने वाले लोग तो उस इन्सान की—सच्चे अर्थों में सुसंस्कृत इन्सान की—शान को नहीं छू सकते जो जाति, धर्म, देश, राष्ट्र, आंचलिकता अथवा रंग का भेद परे हटाकर मानवमात्र से ऐक्य की भावना रखता है। गुरु नानक के साथ मर्दाना की उपस्थिति का मुस्लिम श्रोताओं पर परिवर्तनकारी प्रभाव पड़ा।

हिन्दुओं को गुरु नानक ने उपदेश तथा उदाहरण देकर मूर्तिपूजा तथा जाति भेद के विरुद्ध सीख दी। उन्होंने निम्न वर्गों अथवा जातियों के लोगों के साथ खाना पसन्द किया। सैय्यदपुर (ऐमनाबाद) में वे एक ग़रीब बढ़ई लालो के साथ ठहरे और खाया, तथा खत्री जाति के एक अमीर ज़मींदार मलिक भागो की दावत इसलिए नामंज़ूर कर दी कि लालो तो अपनी मेहनत की रोटी खाता था, पर मलिक ने दूसरों का शोषण कर दौलत इकट्ठी कर ली थी।

पुरानी प्रथा के अनुसार गुरु के पास श्रद्धावश आने वाले लोग, जो उनके आदेशों और आशीर्वादों के आकांक्षी थे, धन तथा सामग्री दोनों की भेंट चढ़ाते। प्रारम्भ में नानक यह सब कुछ उन ग़रीबों में बांट देते थे जो उनके प्रवचन सुनने को आते थे। बाद में उन्होंने सारा चढ़ावा लंगर को चलाने में लगा दिया जो एक मुफ्त भोजनालय था, और जहाँ जाति, धर्म, विश्वास और ओहदे का ध्यान न रख कोई भी भोजन प्राप्त कर सकता था। इस प्रकार गुरु नानक ने जाति भेद को कम करने की कोशिश की। इस संस्था द्वारा उन्होंने अपने अनुयायियों में सेवा और त्याग की भावना भी विकसित की, क्योंकि इस आम भोजनशाला में हर कोई, बिना किसी प्रतिदान के सेवा करता था। इससे नानक की शिक्षा बड़ी लोकप्रिय हो गई। उनके अनुयायियों में, जो 'शिष्य" अथवा "सिख" कहलाने लगे, ये लंगर बराबरी और भाईचारे के प्रतीक बन गए।

ऐमनाबाद से गुरु नानक मुल्तान के निकट तुलम्बा गये। वहाँ उन्होंने कुख्यात ठग शेख़ सज्जन को सीख दी। पवित्रता का बाना ओढ़े यह ठग असावधान यात्रियों को शरण तथा आतिथ्य देता, और रात में उन्हें मारकर उनका माल हड़प लेता। गुरु नानक का संत व्यक्तित्व तथा आत्मा की सच्चाई और उनके मीठे और मोहक भजनों ने इस कठोर अपराधी के हृदय के मर्मस्थल को छू लिया, और उसने अपना जीवन बदल लिया। नानक कहते हैं—

कितना चमकता है कांसा, मलो, मगर हाथ मैला होगा।
जितना चाहो धोवो इसको, अन्दर कालिख नहीं मिटेगी।[1]

---

१. उजलु कैहा चिलकणा, घोटिम कालड़ी मसु।
धोतिआ जूठि न उतरै जे सउ धोवा तिसु। (सूही म० १)

गुरु नानक की चार महान् यात्राएँ

भारत में प्रचलित धर्मों के मुख्य केन्द्रों में जाकर उनके अध्ययन के लिए गुरु नानक ने कई स्थानों की यात्रा की। इन यात्राओं के दौरान वे मानवजाति की शान्ति और प्रेम का अपना संदेश भी प्रचारित करते। गुरु नानक के व्यक्तित्व में कुछ ऐसा था जो विशिष्ट, नाटकीय तथा आकर्षक था। वे मुस्लिम दरवेशों की तरह लम्बा ढीला चोग़ा पहनते, किन्तु इसका रंग हिन्दू संन्यासियों के भगवे जैसा होता। कमर में कपड़े का सफ़ेद कमरबन्द पहनते, और सर पर मुसलमानी कुल्ला यानी कोणदार टोपी लगाकर, इसके चारों ओर छोटी पगड़ी बाँध लेते। पाँव में ढीले जूते होते जो नाप में एक होते हुए भी अलग-अलग रंग और जोड़ के होते। कभी-कभी हड्डियों की माला भी गले में डाले होते।[१] यह विचित्र वेश उनके पास बूढ़े-नौजवान, सब प्रकार के लोगों को खींच लाता। गुरु नानक किसी खुली जगह में खड़े हो जाते और भगवत् भजन गाने लगते। ऐसे अवसरों पर उनके दोनों साथी बाला और मर्दाना उनके साथ गाते तथा मर्दाना साथ ही रबाब भी बजाता।

गुरु नानक ने चार विस्तृत यात्राएँ कीं। सर्वप्रथम वे १४९७ से १५०९ तक पूर्वी यात्रा में रहे, और आसाम तक गये। इस काल में मुख्यतया इन्होंने हिन्दू तीर्थस्थलों का भ्रमण किया। मुख्य तीर्थ स्थानों में गुरु नानक ने अपने श्रोताओं में प्रचार का एक अद्भुत तरीका अपनाया। उदाहरणार्थ, हरिद्वार में गंगास्नान करने वाले लोगों को उन्होंने उगते सूर्य को जल अर्पित करते देखा। नानक कारण तो जानते थे, फिर भी पूछ बैठे कि वे क्या कर रहे हैं। जवाब मिला कि स्वर्ग में स्थित पूर्वजों को वे अंजलि दे रहे हैं। नानक फ़ौरन पश्चिम दिशा की ओर मुँह कर पानी उस ओर उछालने लगे। इस बार लोगों ने पूछा कि वह क्या कर रहे हैं! गुरु नानक ने इत्मीनान से जवाब दिया कि वह पंजाब में अपने खेतों को पानी भेज रहे हैं। उनसे पूछा गया, भला यह पानी यहाँ से तीन सौ मील दूर उन खेतों में कैसे पहुँचेगा! "अगर यह पानी मेरे खेतों में नहीं पहुँच सकता, जो इतने नज़दीक हैं, तो भला तुम्हारा पानी यहाँ से उतनी दूर स्वर्ग में क्योंकर जा सकता है?" इस उत्तर ने हिन्दू यात्रियों की आँखें खोल दीं।

तत्पश्चात् उन्होंने श्रीलंका तक जाकर दक्षिण की यात्रा १५१० से १५१५ तक की। इस काल में उनका उद्देश्य प्रसिद्ध बौद्ध तथा जैन तीर्थस्थलों को देखना था। इस यात्रा में उनके साथ उनके दो जाट अनुयायी, सईदो और ग़ेबो थे। इस अवसर पर उन्होंने दूसरे प्रकार के वस्त्र धारण किये। सर पर एक

---

१. Teja Singh and Ganda Singh, "A Short History of the Sikhs" I, 11.

लम्बी रस्सी को पगड़ी के रूप में बाँधा, एक हाथ में मोटा डंडा, दूसरे में भिक्षा-पात्र ! जहाँ रुकते, खड़ाऊँ पहनते ।[१] चोग़ा पहले जैसा ही था । विवादास्पद प्रश्नों का वे उल्लेखनीय ढंग से हल निकालते । हिन्दू दाह क्रिया तथा मुसलमानी दफ़न क्रिया के भेद के सम्बन्ध में कहा :—

देखो, कुम्हार के हाथ मिट्टी पड़ी मुसलमान की,
वह इस मिट्टी की ईंट और पात्र गढ़ेगा ।
मिट्टी जलती है, कोई अब अंगारों में जलता
चिल्लाता है, व्यर्थ अश्रु बहाता है ।
कर्तार ! तू ही जाने, जलना अच्छा
या कि पृथ्वी तल में गड़ जाना ![२]

बात सच्ची यह है कि क़ब्रगाह की मिट्टी मुलायम और चिकनी होने के कारण कुम्हारों द्वारा पसन्द की जाती है । इस प्रकार मुसलमानों के शव कुम्हार की आग में जलते ही हैं, और दफ़न इस तरह दाह में परिवर्तित होता है ।

१५१५ से १५१७ की अवधि उनकी तीसरी यात्रा की है, जब वे हिमालय की ओर, योगियों और सिद्धों के केन्द्र, उत्तर दिशा में गए । इस बार इनके साथ सीहन तथा हस्सीर नामक क्रमशः धोबी तथा लुहार थे । ठंड से बचने के लिए नानक ने चमड़े के वस्त्र पहने । उन्होंने गोरखनाथ तथा मच्छेन्द्रनाथ के कई अनुयायियों से वार्तालाप किया । नानक ने कहा—"असत्य[३] का अन्धकार चारों ओर फैला हुआ है; सत्य का चन्द्रमा अदृश्य हो गया है । मैं उसे ढूँढ़ने निकला हूँ । पृथ्वी पाप के बोझ से कराह रही है । योगीगण तो पर्वतों में चले गए तथा अपनी देह को राख मलने के अलावा और कुछ नहीं करना जानते । फिर संसार की रक्षा कौन करेगा ? गुरु बिना संसार अज्ञान के सागर में डूब रहा है ।" ज्ञात होता है, नानक[४] तिब्बत में मानसरोवर तथा उसके भी आगे तक गए थे ।

१५१७ से १५२१ का काल पश्चिम दिशा की यात्रा का है जब गुरु ने

---

१. Trump, Adi Granth, xxxiv.

२. मिटी मुसलमान की पेड़ै पई कुम्हिआर ।
घड़ि भांडे इटा कीआ जलदी करे पुकार ॥
जलि जलि रोवै बपुड़ी झड़ि झड़ि पवहि अंगिआर ।
नानक जिनि करतै कारणु कीआ सो जाणै करतारु ॥ (आसा दी वार म० १)

३. Bhai Gurdas, Var, I, 29 ; Teja Singh and Ganda Singh, "A Short History of the Sikhs" I, 11.

४. Swaran Singh, "Divine Master", 139-41, Nanak Prakash, III, 691-92.

मुस्लिम देशों का भ्रमण किया। इस बार मर्दाना उनके साथ थे। नानक ने हाजियों जैसे कपड़े पहने। उन्होंने नीले वस्त्र धारण किये, तथा बग़ल में एक ग्रंथ तथा दरी, जिस पर बैठ कर वह प्रार्थना करते। हाथ में मोटा डंडा था। मक्का में सोते समय इन्होंने अपनें पैर काबा की तरफ़, जो पवित्र इस्लामी तीर्थ स्थल था, किये। किसी ने क्रोध में आ इन्हें जगाया और अल्लाह के घर के प्रति अनादर दिखाने के लिए इन्हें कुवचन सुनाये। बड़े आदर के साथ गुरु ने आगन्तुक से कहा—"मेहरबानी कर मेरे पैर उस दिशा में घुमा दो जहाँ सर्व-वर्तमान ईश्वर मौजूद नहीं है।"

अरब से नानक इराक़ पहुँचे, और कुछ दिन बग़दाद में ठहरे जो इस्लाम के खलीफ़ा का प्रधान स्थल था। वे शहर के बाहर ठहरे। भाई गुरदास ने अपनी वारों में नानक की बग़दाद यात्रा का उल्लेख किया है, और कहा है—"बाबा बग़दाद गये, और शहर के बाहर ठहरे। संत बाबा के साथ रबाब वादक **मर्दाना**[1] था।" तुर्की-अरबी मिश्रित भाषा में एक शिलालेख में गुरु नानक की बग़दाद यात्रा अंकित है। रेलवे स्टेशन से डेढ़ मील दूर एक क़ब्रगाह के पास घेरे की दीवार में यह पत्थर लगा हुआ है। प्रथम विश्वयुद्ध के समय कुछ भारतीय सैनिकों ने ईराक़ में युद्ध किया था और वे बग़दाद में स्थित थे। यह शिलालेख उनकी नजरों में आया और एक सिख अफ़सर ने जनवरी, १९१८ के लॉयल गजेट, लाहौर में (पृष्ठ ४) यह शिलालेख छपवाया। शिलालेख स्पष्ट नहीं पढ़ा जाता, और विभिन्न लेखकों ने इसका अलग-अलग ढंग से अनुवाद किया है। इन्दुभूषण बनर्जी ने मौलाना आगा मोहम्मद क़ासिम शीराज़ी से इसका अनुवाद यूं करवाया; "गुरु मुराद मर गये। बाबा नानक फ़क़ीर ने इस इमारत को बनाने में मदद दी और इस प्रकार एक गुणी अनुयायी के नाते नेक काम किया।"[2] तेजासिंह तथा गंडासिंह ने अपना अनुवाद इस प्रकार दिया—"पवित्र गुरु बाबा नामक फ़क़ीर औलिया की स्मृति में यह इमारत सात सन्तों की मदद से नयी बनायी गयी है; तिथि बंध में लिखा गया है—"भाग्यशाली शिष्य ने ईश्वरीय अनुकम्पा का स्रोत[3] तैयार कर दिया" वर्ष ९२७ हि०।"

नाभा के भाई काहनसिंह ने यह अनुवाद प्रस्तुत किया है—"देखो, ईश्वर

---

१. वार १, पौरी ३५-३६, भाई काहनसिंह, "गुरशबद रत्नाकर महानकोश" भाषा विभाग, पंजाब, पटियाला, १९६०, दूसरा संस्करण, पृ० ६२२।

२. Evolution of the Khalsa, i, f 3. यह अनुवादक पूर्ण तरह से अशुद्ध सिद्ध हो चुका है। देखिए पृ० ४५ (संपादक)

३. A Short History of the Sikhs, i, 12.

ने किस प्रकार यह इच्छा पूरी की कि सात प्रसिद्ध सन्तों की सहायता से बाबा नानक की यह इमारत नये सिरे से बना दी गयी। इसके तिथिबन्ध पर लिखा है कि गुणवान शिष्य ने ज़मीन में एक उपयोगी झरना बना दिया" काहनसिंह की व्याख्या टिप्पणी में कहा गया है कि गुरु नानक के आने से पहले बग़दाद के कुओं का पानी खारा था। गुरु नानक ने एक कुआं खोदा जिससे मीठे पानी का झरना फूट पड़ा।[1] भाई वीरसिंह का अनुवाद इस प्रकार है : "जब मुराद ने महात्मा संत बाबा नानक की इमारत की भग्नावस्था देखी, तो उसने अपने हाथों एक नयी इमारत खड़ी की, ताकि यह ऐतिहासिक रूप से परम्परागत काम आ सके और उनके नेक शिष्य की सेवा कायम रहे। ९१७ या ९२७ हिज्री"[2] फुटनोट में कहा गया है कि इसकी भाषा तुर्की तथा अरबी का मिश्रण है।[3] भाई सन्तोखसिंह तथा और कई लेखकों ने अपने अलग अनुवाद प्रस्तुत किये हैं।[4]

इसका ठीक अर्थ चाहे जो भी निकले, इस शिलालेख से कुछ बातें तो स्पष्ट हो ही जाती हैं। इसमें साफ़-साफ़ बाबा नानक फ़कीर तथा ९२७ हिज्री तिथि का उल्लेख है, जिसे प्रायः सभी स्वीकार करते हैं। ९२७ हि० का आरम्भ दिसम्बर १५२० में तथा अन्त नवम्बर १५२१ में हुआ। नवम्बर १५२१ में नानक सैय्यदपुर, पंजाब, में थे, और उसी समय पंजाब पर बाबर का आक्रमण हुआ। इस आक्रमण की तिथि नानक ने स्वयं १५७८ विक्रम संवत् बतायी है, और उन्होंने आँखों देखे गवाह के रूप में सैय्यदपुर में बाबर द्वारा किए गये क़त्लेआम का विशद विवरण किया है। इसका यह अर्थ हुआ कि १५२० के अन्त में गुरु बग़दाद में थे, और इसके शीघ्र बाद वहाँ से चल पड़े थे।

बगदाद में मर्दाना की उपस्थिति का उल्लेख भाई गुरदास द्वारा किये जाने के बाद उसका नाम फिर किसी भी मूल सिख अभिलेख में नहीं आया।

सिख लेखकों ने मर्दाना की मृत्यु की तिथि तथा स्थान को बताने में कई मत प्रकट किये हैं। भाई काहन सिंह कहते हैं कि मर्दाना का जन्म १४५९ में और मृत्यु अफगानिस्तान में कुर्रम नदी के किनारे १५३४ में हुई, तथा स्वयं गुरु नानक

---

१. गुरशबद रत्नाकर महानकोश भाषा विभाग, पंजाब, पटियाला। १९६० संस्करण, पृ०६२२।
२. श्री गुरु नानक चमत्कार, ii, ख़ालसा समाचार, अमृतसर, १९६६ संस्करण, पृ० १७५।
३. वही।
४. श्री गुरु नानक प्रकाश, ख़ालसा समाचार, अमृतसर, १९६२ संस्करण, पृ० १०५२।

ने उसकी अंत्येष्टि क्रिया की।[1] गुरु नानक उस वर्ष तो कर्तारपुर में रह रहे थे, अतः, इस तिथि को सही नहीं माना जा सकता। कर्तार सिंह इस तिथि को मानते हुए यह कह कर भूल सुधारते हैं कि मर्दाना की मौत कर्तारपुर में हुई।[2] Selections from the Sacred Writings of the Sikhs के पृष्ठ २४८ की एक टिप्पणी में कहा गया है कि "गुरु नानक के निधन के नौ वर्ष पहले मर्दाना की मृत्यु कर्तारपुर में हुई।"

[संपादकीय टिप्पणी :

इसके पूर्व इस शिलालेख के पाँच अनुवाद प्राप्त होते थे। डा० डब्ल्यू०एच० मैकलॉड ने अपनी पुस्तक (Guru Nanak and Sikh Religion, पृ० १२८-२९) में इस शिलालेख का छठा अनुवाद दिया है। यह अनुवाद लंदन के 'स्कूल ऑफ ओरिएण्टल स्टडीज' के तुर्की विभाग के रीडर डॉ० वी० एल० मेनेज़ ने किया है और उसके लिए उन्होंने ब्रिटिश संग्रहालय की कुमारी कोलन द्वारा इस शिलालेख के उतारे अनेक चित्रों की सहायता ली है।

डॉ० मेनेज़ ने शिलालेख पर दिये शब्द 'गुरु' की बजाय गोर (Gor) पढ़ा है जिसका अर्थ है मक़बरा। उन्होंने 'मुराद' का अनुवाद 'इच्छा' किया है और 'हजरात रब-ए-मजीद' का अनुवाद 'गौरवशाली प्रभु' अथवा 'दैवी स्वामी' किया है। यह अभिव्यक्ति किसी सांसारिक व्यक्ति के लिए नहीं हो सकती, यह केवल परमात्मा के लिए ही है। किंतु डॉ० मेनेज़ यह स्वीकार करते हैं कि "दूसरी पंक्ति का वह अंश मैं नहीं समझ सका जिसे पूर्व अनुवादकों ने बाबा नानक फकीर अथवा अधिक शुद्ध बाबा नानक-ए-फकीर (६ या ७ अक्षर) पढ़ा है। छायाचित्रों में पहले अक्षर निश्चित रूप से 'बाबा नानक' दिखते हैं और उसके बाद का शब्द, जो स्पष्ट नहीं है, 'फकीर' हो सकता है।

डॉ० मेनेज़ और डॉ० मैकलॉड कुछ भी विश्वास करते हों, डॉ० मेनेज़ के अनुवाद से यह तो स्पष्ट है ही कि शिलालेख पर 'बाबा नानक' का नाम निश्चित रूप से प्राप्त होता है। यह गुरु नानक की बगदाद-यात्रा का पर्याप्त प्रमाण है। जिस सिख अधिकारी ने प्रथम विश्वयुद्ध के दिनों में इस शिलालेखको खोजा था, उसके कथनानुसार सन् १९१७ में यहां के स्थानीय लोग बाबा नानक का नाम बड़ी श्रद्धा से लिया करते थे।]

---

१. गुरशब्द रत्नाकर महानकोश, ७१४

२. सिख इतिहास, II शि० गु० प्र० स० अमृतसर, १९६१ संस्करण, पृष्ठ ६-७।

कर्तारपुर में गुरु नानक

गुरु नानक के पच्चीस साल की प्रचार यात्राओं के समय उनका परिवार उनके बहनोई के साथ पखोके[1] में, जो रावी के पूर्वी किनारे पर था, रहा। इस जगह के सामने, नदी के पार, नानक ने कुछ ज़मीन ले रखी थी जहां उन्होंने कर्तारपुर (अर्थात् ईश्वर का घर) नामक गांव बसाया। यहां उन्होंने अपने परिवार तथा कुछ अपने भक्त शिष्यों के साथ जीवन के आखिरी सत्रह साल बिताये। अपनी ज़मीन जोतकर वे जीवनयापन करते, किन्तु काफी समय प्रार्थना तथा उपदेशों में बिताते थे। पास-पड़ोस के गांवों के सभी जातियों और धर्मों के लोग गुरु के भजनों को सुनने के लिए आते। मैकॉलिफ़ ने लिखा है, "गुरु हमेशा धार्मिक विषयों पर बातें करते तथा उनकी उपस्थिति में भजन गाये जाते। संध्या में सोदर तथा सोहिला, और मधुर प्रभात के क्षणों में जप जी का पाठ होता।"[2] इस तरह की **संगत** नये समाज का एक नियमित अंग बन गयीं। गुरु की ग़ैरहाज़िरी में भी नियत स्थानों और समय पर संगतें होती रहती थीं। लंगर भी नियमित रूप से चलता।

अपनी मृत्यु से कुछ पहले गुरु नानक ने अपने परम भक्त तथा कृतज्ञ शिष्य, भाई लहना को अपना उत्तराधिकारी मनोनीत किया। एक विशेष समारोह में उन्होंने लहना के सामने एक नारियल और पांच पैसे रखे, अपना सिर उसके पैरों से छुवाया और उसे अंगद नाम से पुकारा यानी अपने ही अंग का अंश, और घोषणा की कि नये गुरु में उनकी अपनी आत्मा और भावना भी है। इस प्रकार उन्होंने गुरुपद की एकता की स्थापना की जो निःस्वार्थता, अविभाज्यता तथा निरंतरता के आधारों पर स्थित हुई। फल यह हुआ कि बाद के गुरुओं ने अपनी रचनाओं तथा पत्रादि में 'नानक' नाम का ही व्यवहार किया है। प्रत्येक गुरु के भजन आदि ग्रन्थ में महल्ला के रूप में विभाजित है। प्रथम गुरु के भजन गीत प्रथम महल्ला में है, दूसरे गुरु के द्वितीय महल्ला में इत्यादि।[3]

---

१. Teja Singh and Ganda Singh, 'A Short History of the Sikhs'.

२. Macauliffe : "The Sikh Religion," i, 181

३. मोहसिन फ़ानी ने लिखा—"सिखों का विश्वास है कि मृत्यु के बाद गुरु नानक का शरीर उनके प्यारे शिष्य अंगद के शरीर में प्रवेश कर गया। इस तरह गुरु अंगद स्वयं नानक बन गये। इसी प्रकार गुरु अंगद की मृत्यु के समय उनका अंश अमरदास में प्रविष्ट हुआ, तथा गुरु अमरदास का अंश रामदास में, रामदास का अर्जुन में। हरेक को महल नाम दिया गया! प्रथम महल नानक, दूसरे अंगद, पांचवें महल गुरु अर्जुन। उनका विश्वास है कि जो कोई गुरू अर्जुन में बाबा नानक की अपनी आत्मा को नहीं पहचानता वह मनमुख या काफिर है। (दाबिस्तान, पृ०२२५) गुरू हरगोबिन्द ने भी मोहसिन फानी को पत्र लिखते समय अपना नाम नानक ही लिखा है (वही, पृ० २३७)

इस कार्यवाही का दूर तक असर हुआ। गुरु नानक ने गुरु गद्दी के लिये अपने पुत्र श्री चंद के दावे को अस्वीकार कर दिया था, क्योंकि वे संसार को मिथ्या समझते थे। दूसरी ओर नानक स्वयं गृहस्थ थे, अंगद अथवा भाई लहना भी गृहस्थ ही थे। गुरु नानक ने सिख धर्म में संन्यास को नहीं शामिल किया और इसे गृहस्थों का धर्म बनाया। फिर, सिख धर्म में गुरु गद्दी के अपने अनुयायियों के सामने एक जीवन्त आदर्श रख कर नयी प्रतिष्ठा पायी। सिखों का जीवन गुरु के व्यक्तित्व पर केन्द्रित होता, जिन्हें वे पूजते तथा अनुकरण करते। वे सदा उनके निकट सम्पर्क में रहा करते। किन्तु, कुछ लोगों का यह विचार है कि नानक ने "किसी नये धार्मिक विश्वास की न स्थापना की, न किसी नये समुदाय को संगठित किया। ये काम उनके उत्तराधिकारियों ने, विशेष रूप से पांचवें गुरु ने किया। नानक ने आत्म-सम्मान वाले लोगों को लेकर, जो ईश्वर और अपने गुरुओं के भक्त थे, तथा जिनमें समानता तथा सर्वबंधुत्व की भावना भरी थी, एक राष्ट्र बनाने की चेष्टा की थी।[१] गुरु नानक ने २२ सितम्बर १५३९ को (असौज बदी १०, संवत १५९६ विक्रमी) को यह संसार छोड़ दिया। दोनों सम्प्रदायों के लोगों ने उनसे इतना प्रेम किया था कि उनके बारे में कहा गया :—

"गुरु नानक शाह फ़क़ीर,
हिन्दू का गुरु, मुसलमान का पीर"

वे सारी मानव जाति के लिए वह विरासत छोड़ गये जो आज भी मौजूद है और जो हमेशा भविष्य में भी सम्पूर्ण मानवता को प्रेरित और उसकी सेवा करती रहेगी।

गुरु नानक के धर्म के मुख्य सिद्धान्त

(१) **ईश्वर की परिकल्पना :** गुरु नानक एक, और केवल एक ईश्वर में विश्वास करते थे जिसकी व्याख्या उन्होंने जपजी में इस तरह की—

"एक ही ईश्वर है,
चिरन्तन सत्य जिसका नाम,
पूर्ण निर्माता है वह,
निर्भय, निर्वैर है,
उसका रूप अनन्त है;
अजन्मा, स्वजन्मा;

---

१. Selections from the Sacred Writings of the Sikhs, p. 18.

गुरु की कृपा हो
वह प्राप्त होता है।"[1]

गुरु ने इसमें यह भी कहा—"ओ प्रकाश के स्वामी! वह प्रकाश जो सब कुछ है, तेरा है, इसकी प्रभा से सब कुछ आलोकित है।" गुरु नानक का ईश्वर उनका अपना है, जो दयालु है, और जो अपने सच्चे श्रद्धालुओं की, उनके कष्ट और संकट में, सहायता करता है। यंत्रवत् नामोच्चार तथा रस्मोदायगी से नहीं, बल्कि सच्ची भक्ति, पूर्ण आत्मसमर्पण तथा निरन्तर नाम सुमिरन से ही इन्सान अपने भगवान् को पा सकता है—'अपने को मिटा दे, तभी तेरा दूल्हा तुझे मिलेगा।' नानक ने कहा—"हर कोई ईश्वर का नाम लेता है, मगर नाम रटने से ही वह भला क्यों मिलने का? गुरु की कृपा से जब ईश्वर का निवास हृदय में होगा तभी साधक को फल की प्राप्ति होगी।"

गुरु के अनुसार, सत नाम के बिना कोई भी मुक्ति नहीं प्राप्त कर सकता। सत नाम ईश्वर की उपासना और भक्ति तथा उसके सदा ही सर्वव्यापी होने का महत्त्व बताता है। भक्ति इतनी गहन बनानी होगी कि व्यक्ति पूर्णरूपेण ईश्वर में खो जाये। ईश्वर में यह विलयन शांति और आनन्द प्रदान करता है, ईश्वर से विमुखता दुःख और दर्द का कारण होता है।

गुरु नानक ने हिन्दू विचारों को पौराणिक कथाओं और जातिवाद से मुक्त करना चाहा : जाति भेद ग़लत है, अलग-अलग नाम ग़लत हैं। सारे प्राणियों का एक ही सहारा है, ईश्वर।" मोहसिन फ़ानी ने लिखा है : "नानक की वाणी अर्थात् भक्ति रचनायें प्रार्थना, परामर्श तथा सचेत करने का काम करती हैं। उनकी बहुत-सी सीख ईश्वर की महानता तथा पवित्रता से सम्बन्धित है।"[2]

(२) **गुरु का स्थान** : नानक ने ईश्वर-प्राप्ति के लिए गुरु का होना आवश्यक बताया। गुरु द्वारा ही व्यक्ति परमात्मा के सम्पर्क में आ सकता था।" बिना गुरु के उपदेश के मनुष्य का उद्धार संभव नहीं; चाहे वह सैकड़ों-हज़ारों रस्में करे, गुरु बिना उसके लिए फिर भी अंधेरा होगा। किसी देवी-देवता को पूजने की कोई ज़रूरत नहीं।" गुरु ने जपुजी में कहा है—

गुरुवाणी है अंतर संगीत;
गुरुवाणी है उच्चतम ग्रंथ;
गुरु की वाणी सर्वव्यापक है।
गुरु स्वयं है ब्रह्मा, स्वयं विष्णु,
गुरु ही स्वयं है महेश भी।

---

१. एक ओम्कार सतिनाम् करता परखु निरभै निरवैरु
अकालमूरति अजूनी सैभं गुरु प्रसादि।
२. मोहसिन फ़ानी : दबिस्तां, पृ० २२४।

गुरु ही हैं देवी माता"[1]

पर सत गुरु कैसे पाया जाये ? गुरु नानक कहते हैं—

सतिगुरु भेटे सो सुखु पाए।
हरि का नामु मंनि वसाए ।।
नानक नदरि करे सो पाए।[2]

गुरु अपने शिष्यों से पूर्ण समर्पण की माँग करते हैं। शिष्यों को मुक्ति गुरु के उच्च आत्मिक बल के द्वारा तथा उनके बताये गये रास्तों पर चलकर मिलेगी। मनुष्य को अपने कर्मों का यथोचित फल मिलता है। नानक कहते हैं—

"सच्चे और झूठे केवल शब्दमात्र नहीं,
क्योंकि अपने किये का फल ले जाना होगा।"[3]

यह जरूरी है कि गुरु के आदेशों का निर्विवाद पालन हो; किन्तु यह स्पष्ट समझ लेना होगा कि गुरु मूल रूप से 'उपदेशक' हैं, 'ईश्वर के अवतार नहीं'; उनकी आज्ञा का पालन करना है, उनकी पूजा नहीं करनी। गुरु हमें बताते हैं कि सच्चा धार्मिक कौन है—

"जो सब इन्सान को बराबर समझे, धार्मिक है।
धर्म क़ब्रों और श्मशानों के चक्कर में नहीं,
धर्म योग मुद्राओं और आसनों में नहीं;
भिक्षु बन देश पर्यटन में नहीं, नदियों
तीर्थों में भी धर्म छिपा हुआ नहीं।
काजल कोठरी में भी उजला रह,
धर्म तभी तुझे मिल पायेगा।"[4]

(३) **कर्म तथा पुनर्जन्म सम्बन्धी विचार** : गुरु नानक का विश्वास प्राचीन हिन्दू विश्वास से भिन्न था। उनके मतानुसार मोक्ष अथवा पुनर्जन्म से छुटकारा सद्कर्मों के साथ-साथ परमेश्वर की अपनी अनुकम्पा द्वारा भी संभव है। यह अनुकम्पा प्रेम और भक्ति के साथ **नाम सुमिरन** से प्राप्त हो सकती है।

---

१. गुरमुखि नादं गुरमखि वेदं गुरमुखि रहिआ समाई।
गुरु ईसरु गुरु गोरखु बरमा गुरु पारवती माई ।।

२. आसा दी वार म० १।

३. Gopal Singh : Translation of Shri Guru Granth Sahib, Vol. I, p. XXXIII.

४. एक दसटि करि समसरि जाणै जोगी कहीऐ सोई।१।
जोगु न बाहरि मड़ी मसाणी जोगु न ताड़ी लाईऐ ।।
जोगु न देसि दिसंतरि भविऐ जोगु न तीरथि नाईऐ ।।
अंजन माहि निरंजनि रहीऐ जोगु जुगति इव पाईऐ ।। (राग सूही म० १)

उन्होंने कहा भी—

"सिर्फ़ कहने भर से हम
पापी या संत नहीं बन जाते;
कर्मों के लेखा-जोखा से
जैसा वोएंगे, पायेंगे भी।
ईश्वर चाहेगा तभी मिलेगा
मोक्ष, नहीं तो जन्म-मरण का चक्कर।"[१]

गुरु नानक ने कहा कि आदमी में पाँच बुराइयाँ होती हैं : वासना, क्रोध, लोभ, मूढ़ता तथा अहंकार; किन्तु साथ ही उसमें इन सभी पर काबू पाने की क्षमता भी है। अहं एक गंभीर व्याधि है, पर इसका इलाज तुम्हारे भीतर है। जीवन चूँकि पवित्र प्रकाश से उद्‌भासित हुआ है, इसलिए यह मूलतः पवित्र ही है।

नानक ने व्रत, तीर्थयात्रा तथा प्रायश्चित जैसे पवित्रता के बाह्य चिह्नों की भर्त्सना की। उन्होंने तपस्या तथा संन्यास की निन्दा की। ईश्वर उसी तरह गृहस्थ को अपनायेगा जैसे तपस्वी को, तथा लौकिक कार्य मुक्ति के मार्ग में बाधा नहीं बनेंगे। उन्होंने सत्संग की सराहना की, जिसमें पवित्र व्यक्तियों का साथ होता था। वे अत्यन्त विनम्रता में विश्वास रखते थे और सारी मानवता को प्यार करते; इसमें वे धार्मिक या भौगोलिक सीमाओं का बंधन नहीं रखते थे।

(४) **भक्ति परम्परावादियों से गुरु नानक का मतभेद** : यद्यपि गुरु नानक स्वयं भक्ति परम्परा के सन्त थे, वे रामानन्द, कबीर और चैतन्य जैसे भक्तों से अलग थे। उदाहरण के लिए, चैतन्य यह मानते थे कि मूल सिद्धान्तों की उपलब्धि तथा स्वीकृति से ही सामाजिक परिवर्तन लाए जा सकते हैं। इधर गुरु नानक शुरू से ही समाज सुधार तथा नाम सुमिरन पर बल देते रहे। दूसरे, सिख गुरुओं ने संन्यास को वर्जित माना, जबकि भक्ति परम्परा के संतों ने इस को बढ़ावा दिया। तीसरे, सिख धर्म असाम्प्रदायिक था, इसमें मिथक नहीं थे, रूढ़ियां तथा अस्पष्टतायें नहीं थीं। सादगी में विश्वास तथा बदलती परिस्थितियों के अनुकूल आसानी से व्यवस्थित होने की क्षमता थी। चौथी बात यह है कि गुरु नानक ने ही गुरु परम्परा की स्थापना कर अपना उद्देश्य आगे बढ़ाया। गुरु नानक ने ही संस्कृत को उस स्तर से हटाया जहां वह हिन्दू धर्म की एक मात्र भाषा बनी बैठी थी, यद्यपि कई दूसरे भक्ति

---

१. पुंनी पापी आखणु नाहि। करि करि करणी लिखि लै जाहु ॥
आपे बीजि आपे ही खाहु। नानक हुकमी आवहु जाहु ॥ (जपुजी)

परम्परा के संत अपनी स्थानीय भाषाओं में भी उपदेश दे रहे थे। निःसन्देह इसका असर यह हुआ कि सिख धर्म प्रधानतया पंजाब तक ही सीमित हो गया। अंतिम बात यह है कि भक्ति पद्धति के अन्य नायकों से नानक की ईश्वर सम्बन्धी कल्पना भिन्न थी। सिखों के ईश्वर निराकार तथा अकाल हैं, किन्तु अन्य धर्म नेताओं ने राम और कृष्ण को ईश्वर का अवतार माना।

गुरु नानक की उपलब्धियां

नानक के समय भारतीय समाज अलग-अलग जातीय विभागों में बंटा हुआ था, और व्यक्ति का ओहदा उसके कार्यों तथा गुणों पर नहीं, जन्म पर निश्चित किया जाता। समानता की कल्पना भी दूभर थी, तथा ऐक्य अथवा मानव-बंधुत्व की कोई भावना नहीं थी। औरत को मर्द से नीचा समझा जाता, और उन्हें हेय माना जाता। गुरु नानक ने नारी को बराबरी का दर्जा, बल्कि ऊंचा दर्जा दिया, और स्त्रियां निर्बाध रूप से उनकी धार्मिक संगतों में शामिल होतीं। उन्होंने विधवाओं की सती क्रिया की आलोचना की। वे कहते हैं:—

"नारी को क्यों नीचा मानें ?
उसमें हम अंकुर लेते
उससे ही जनम पाते।
नारी से रिश्ता कर हम
उससे अपना व्याह रचाते।
प्यार उसी से हम हैं करते,
जाति हमारी विकसित करती,
दूजी आती इक जब मरती।
हम समाज से सम्बन्ध जोड़ते।
उसे बुरा क्यों कहें—
ओछी कैसे हो जाती ?
जो राजाओं को देती जन्म ?[1]

गुरु ने एक ऐसी जातिविहीन तथा वर्गहीन समाज के निर्माण की चेष्टा की जिसमें कोई शोषण न हो, और सभी समान समझे जाएं। अपने निजी उदाहरण से ही उन्होंने लोगों को भाइयों की तरह साथ रहना सिखाया। वे स्वयं

---

१. भंडि जंमीऐ भंडि निमीऐ भंडि मंगणु वी आहु।
भंडहु होवै दोसती भंडहु चलै राहु॥
भंडु मुआ भंडु भालिऐ भंडि होवै वंधानु।
सो किउ मंदा आखिऐ जितु जंमहि राजान॥ (वार आसा म० १)

सब जाति तथा वर्गों, ऊंच-नीच के साथ खाते थे। उनके लंगर में सभी साथ बैठ कर एक ही प्रकार का भोजन करते। गुरु नानक कहते थे कि हर सिख घर धर्मशाला हो, अर्थात् सेवा तथा उपासना का स्थल हो। भाई गुरुदास कहते हैं—"जहां भी गुरु नानक के पवित्र चरण पड़े, धर्मशालायें प्रगट हो गयीं।"[१]

गुरु नानक ने पंजाब निवासियों के सामने यह आदर्श रखा, और अंत में इसके कारण उनके अनुयायी एक सुगठित समाज के सदस्य हो गये। निर्धारित समय का ध्यान रखते हुए उचित निर्देश की आवश्यकता थी, और गुरुपद जैसी संस्था द्वारा गुरु नानक ने निर्देश दिया भी। नानक की सीख के अनुसार मनुष्य के उद्धार के लिए सच्चे गुरु का होना आवश्यक है।

उपसंहार

गुरु नानक सुधारक थे या क्रान्तिकारी ? मैकॉलिफ़ तथा भाई काह्नसिंह जैसे कुछ लेखकों ने नानक को एक इन्कलाबी बताया है, क्योंकि उन्होंने उस समय की धार्मिक तथा सामाजिक संस्थाओं, तथा हिन्दु-मुसलमान समाज में प्रचलित अंधविश्वासों की कड़ी आलोचना की है। गुरु नानक ने एक नये "जाति-विहीन तथा वर्गहीन समाज" की भी नींव डाली। फिर भी, गुरु नानक ने कभी हिंसा के व्यवहार को प्रोत्साहित नहीं किया, तथा अपनी उद्देश्य प्राप्ति के हेतु शांतिपूर्ण प्रोत्साहन में ही विश्वास रखा। उन्होंने हिंदू धर्म या इस्लाम अथवा सम्बद्ध संस्थाओं के मूल या शुद्ध रूप की निन्दा नहीं की। गुरु नानक ने आलोचना उन भ्रष्ट तथा गंदी कुरीतियों की की जो उनके समय में प्रचलित थीं, तथा चतुर तथा लोभी ब्राह्मणों या मुल्लाओं द्वारा भोली जनता के शोपण की निन्दा की। कबीर की भांति वे भी मानते थे कि वेद और किताबें झूठी नहीं, बल्कि वे मूढ़ झूठे या बहके हुए हैं जो उनके उपदेशों का अध्ययन नहीं करते, अर्थ नहीं समझते।

"वेद, कतेब कहो मत झूठे,
झूठा सो जो न विचारे"

वेद-पुराणों के उपदेशों को न समझने वाले लोग ही उन ग्रंथों का लाभ नहीं उठा पाते, जैसे किसी गधे पर चन्दन की लकड़ी लाद दो, पर उसकी सुगन्ध से गधे को क्या ? यही कारण है कि भाई गुरदास ने अपने समकालीन लोगों में अंधविश्वास की कुरीतियों का कारण वेदों के प्रति उनका अज्ञान बताया।

गुरु नानक की सबसे तीव्र आलोचना जाति-व्यवस्था तथा हिन्दू समाज के वर्गीकृत रूप के विरोध में हुई। उन्होंने तत्कालीन रीति रिवाजों की भी कड़ी

---

१. भाई गुरदास, वार १, पौड़ी २७।

आलोचना की है, जिनका पालन बिना उनका असली अर्थ समझे होता रहा था। गुरु नानक यह नहीं चाहते थे कि पुरानी संस्थाओं को तोड़ दिया जाए, बल्कि वे इनका शांतिपूर्ण तरीके से—हिंसात्मक या क्रांतिकारी ढंग से नहीं—सुधार करना चाहते थे।

फिर, संगत की स्थापना आखिर कोई नयी अथवा क्रांतिकारी खोज नहीं थी। इसके पहले भी बौद्ध संघों तथा इसाइयों तथा मुसलमानों के पवित्र जल्सों में ऐसी-बैठकें होती रही हैं। फिर भी, इससे इनकार नहीं किया जा सकता कि संगत तथा लंगर दो ऐसी संस्थायें हैं जो गुरु नानक द्वारा स्थापित होने के बाद से नियमित रूप से चल रही हैं, तथा सिख समाज को जनतांत्रिक तथा समतांत्रिक बनाने का श्रेय इन्हीं संस्थाओं को है।

अंत में, कई सिख लेखकों ने कहा है कि गुरु नानक द्वारा गुरु गद्दी की स्थापना एक क्रांतिकारी क़दम था, जिसके कारण धीरे-धीरे सिख समुदाय का निर्माण तथा खालसा पंथ का जन्म हुआ। किन्तु गुरु व्यवस्था गुरु नानक के पहले भी थी, और उनके समय में भी लोग इस तरह की व्यवस्था को जानते थे। पर यह भी सही है कि दस सिख गुरुओं की संस्था अद्वितीय थी, तथा इसने उस राष्ट्र तथा वीर भावना को जन्म दिया जिसके कारण सिख समाज प्रसिद्ध रहा है।

इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि गुरु नानक ने किसी के प्रति हिंसा या शत्रुता का भाव नहीं रखा। बुद्ध की तरह गुरु नानक सभी धर्मों के लोगों के साथ शांति, प्रेम, सद्भावना तथा मेल से रहना चाहते थे। उनका मुख्य कार्य उन अंधविश्वासपूर्ण कुरीतियों को हटाना था जिनसे मानवता त्रसित थी, और यह काम भी वे तलवार के ज़ोर पर या हिंसा-प्रयोग से नहीं, बल्कि सर्वथा उदार तथा शांतिपूर्ण ढंग से करना चाहते थे। अतः बेझिझक हम इस निष्कर्ष पर आ सकते हैं कि गुरु नानक सुधारक थे, पर क्रांतिकारी नहीं।[1]

---

१. **टिप्पणी** : जान पड़ता है, इस विद्वतापूर्ण लेख के लेखक ने 'हिंसा' और 'क्रान्तिकारी' को समान अर्थों में समझा है, मानो क्रांतिकारी कार्य हमेशा ही हिंसात्मक ही होते हैं। हमारे ही काल में एक शांतिपूर्ण क्रांति की इस देश में महात्मा गांधी ने, जिनकी जन्म शताब्दी के साथ गुरु नानक की पंच शताब्दी मनाई जा रही है, एक ऐसे समाज की नींव डाली जो "जातिविहीन तथा वर्गहीन हो", जो जनतांत्रिक तथा समतांत्रिक हो, 'एक क्रांतिकारी' कदम नहीं तो क्या था? यह भी सच है कि साथ साथ गुरु नानक एक महान सुधारक भी थे जिन्होंने भारतीय समाज को बहुत-सी कुरीतियों तथा अंधविश्वासों से मुक्त कराना चाहा था। इस प्रकार गुरु नानक "क्रांतिकारी" भी थे और "सुधारक" भी, और दोनों एक साथ होने में कुछ भी अस्वाभाविक अथवा परस्पर विरोधी नहीं है। हमारे अपने समय में महात्मा गांधी पर भी यही बात लागू होती है। —सम्पादक